स्वात्मानुभूति

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़

पूर्व कुलपति सिंघानिया विश्वविद्यालय राजस्थान

स्वयं की अनुभूति करना स्वात्मानुभूति है। मनुष्य इस संसार को बहुत जानता है। किन्तु वह अपने विषय में जानने का प्रयास नहीं करता। विद्यालयों में ज्ञान की अनेक शाखाओं के बारे में पठन पाठन होता है। हम जीवनभर संसार के बारे में ही अध्ययन करते रहते हैं। अपने बारे में जानने का प्रयास कभी नहीं करते। जब हम अपने बारे में जानने का प्रयास करते हैं तो हमारी दृष्टि आत्माभिमुखी होती है। जो अपने को जान लेता है वह सब कुछ जान लेता है। आत्मा का ज्ञान ही सबसे बड़ा ज्ञान है। यह ज्ञान प्राप्त करने के लिए बाह्य संसार को त्यागना पड़ता है। आत्मा ही ज्ञाता है, वही द्रष्टा है। अपने को जानने का मनुष्य को प्रयास करना चाहिए। हम दूसरों को अधिक जानते हैं लेकिन अपने को नहीं। हमारी दृष्टि परापेक्षी है। इसलिए हम दूसरों की तरफ अधिक देखते हैं और अपनी तरफ कम। अपनी ऊर्जा का ज्ञान सभी को होना चाहिए। दूसरों का परीक्षण तो सभी करते हैं किन्तु अपना परीक्षण बहुत कम लोग करते हैं। अपने को जानने का अर्थ है अपनी समीक्षा करना। अन्तः समीक्षा का अर्थ है– अपने गुण दोषों का विचार करके, अन्तः समीक्षा करके सुधार करना। अन्तः समीक्षा से अन्तःकरण शुद्ध होता है। मानव गलती तब करता हैं जब उसको गलती का ज्ञान नहीं होता। यदि क्या करणीय हैं क्या अकरणीय हैं इसका ज्ञान हो जाये तो सम्भवतः मनुष्य गलती न करें। इसके लिए प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है। हर वस्तु का परीक्षण होता है। व्यक्ति जब बच्चा रहता हैं तो प्रत्येक चीज का उसको ज्ञान कराया जाता है और यह बताया जाता हैं कि उसे क्या करना हैं और क्या नहीं करना है। संस्कारों को बीज बपन बचपन में ही किया जाता है। समय–समय पर उसका अन्तः निरीक्षण भी होना चाहिए। विकास की जो धारा प्रारम्भ की गई हैं वह आगे बढ़ रही हैं या नहीं, उसमें क्या कमी है, उसको कैसे ठीक किया जाये, ये सब बाते अन्तः समीक्षा से ही ज्ञात होती है। चिन्तन–मनन और निदिध्यासन करने से

धीरे–धीरे ज्ञान स्थायी हो जाता है। चिन्तन का अर्थ हैं किसी विषय पर मन लगाकर उसके गुण दोषों पर विचार करना।

मानव जीवन में अनेक विषय होते हैं, जिनके बारे में उसकी अच्छाई और बुराई के बारे में विचार किया जाता है और अच्छाई को ग्रहण किया जाता है। यह कार्य चिन्तन का है। मनन के द्वारा मानसिक चिन्तन होता है। विद्यार्थी जब किसी पाठ का स्मरण करता हैं तो उस पर वह मनन करता है। मनन करने से पाठ दिमाग में स्थित हो जाता है। जब बार–बार यह क्रिया की जाती हैं तो वह निदिध्यासन कहलाने लगती है। समीक्षा के लिए निरपेक्ष दृष्टि होनी चाहिए। मनुष्य जितना अपने को जानता है उतना अन्य लोगों को नहीं जानता। यदि वह ईमानदारी से अपना परीक्षण करें तो गुण–दोष दोनों स्पष्ट हो जाएगें। आत्मा में परमात्मा बनने की शक्ति है। यदि कोई अपनी समीक्षा करें और अवगुणों को निकाल दें तो आत्मा परमात्मा बन सकती है। सोई हुई शक्ति का जागरण आवश्यक है। जो स्वयं में विश्वास करता है ईश्वर उसी की सहायता करता है। यदि स्वयं में विश्वास नहीं है तो उसकी सहायता कोई नहीं कर सकता। कुण्डलिनी जागरण, ध्यान योग की प्रक्रिया का अभ्यास करके आत्म शक्ति का प्रयास करना चाहिए। मनुष्य को दूसरों को साथ में लेकर चलने की शक्ति होनी चाहिए। जो आत्मविश्वास करता है उसकी सहायता करने के लिए दूसरे लोग भी आ जाते हैं। मनोबल की दृढ़ता आवश्यक है। मन के अन्दर कितनी ताकत है इसका ज्ञान यदि करना है तो मन को एकाग्र करना चाहिए। शरीर को सदैव सक्रिय रखना चाहिए और मन को सदैव स्थिर रखना चाहिए। मन, वचन और काया की प्रवृत्ति किसी कार्य के लिए तत्पर होती हैं तो निश्चित ही वह कार्य पूरा हो जाता है। मन को भटकने नहीं देना चहिए। मन को अमन कर देना चाहिए।

निरहंकारता आत्म समीक्षा का बहुत बड़ा गुण है। अहंकारी व्यक्ति उदण्ड होता है। अहंकारी व्यक्ति झुकता नहीं जो झुकता नहीं वह टूट जाता है। जो जितना विनम्र होकर चलता है वह उतना ऊंचा उठ जाता है। दूसरों के अवगुणों को नहीं बल्कि गुणों को देखना चाहिए। व्यक्ति का परीक्षण कोई दूसरा नहीं कर सकता। अपनी समीक्षा स्वयं करनी चाहिए। जब व्यक्ति अपने अवगुणों को देखने लगता है तो उसका अन्तःकरण पवित्र हो जाता है। शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व के साथ जीवन जीना चाहिए। मनुष्य को यह सोचना चाहिए कि जैसे मुझे दुःख

अप्रिय है वैसे ही वह अन्य प्राणियों को भी है। इसलिए अनुकूल व्यवहार सभी प्राणियों के साथ होना चाहिए। स्वयं की समीक्षा करने से व्यक्ति में सुधार आता है। व्यक्ति के सुधारे से समाज और राष्ट्र में सुधार आता हैं इसीलिए कहा गया है कि सुधरे व्यक्ति समाज व्यक्ति से राष्ट्र स्वयं सुधरेगा। अर्थात व्यक्ति समाज की सबसे छोटी इकाई है। व्यक्ति में सुधार से समाज और राष्ट्र का सुधार सम्भव है। जीवन में सर्वत्र द्वैत का दर्शन होता है। द्वैत से अद्वैत की ओर जाने की प्रक्रिया पूर्णता की प्रक्रिया है। द्वैत साधन है और अद्वैत हमारा लक्ष्य संसार में सर्वत्र दो छोर है– जीवन और मरण, स्त्री और पुरुष, जड़ और चेतन, द्वैत और अद्वैत। जीवन एक स्वाभाविक प्रक्रिया है। जन्म के बाद व्यक्ति बड़ा होता है उसका एक लक्ष्य होता हैं और लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए व्यक्ति प्रयास करता है। बार–बार के अभ्यास से लक्ष्य की प्राप्ति हो जाती है। यदि किसी कारण से असफलता मिल रही हैं तो मानव को अन्तः समीक्षा करनी चाहिए।